DOI: 10.51220/hjssh.v8i1.4

Himalayan J. Soc.Sci. & Humanities Vol- 8 pp.39 -44, December, 2013, ISSN. 0975 - 9891

डोला पालकी : समस्या और समाधान

सुरेश चन्दोला
इतिहास विभाग,
हे0न0ब0ग0वि0वि0 परिसर पौड़ी गढ़वाल-246001 उत्तराखण्ड

Received: 18-07-2013 **Revised: 10-10-2013** **Accepted: 20-11-2013**

ABSTRACT

एक ओर गांधी जी देश में स्वाधीनता आन्दोलन का संचालन कर रहे थे तो दूसरी ओर वह समाज में दलितों को अधिकार दिलाने की लड़ाई भी साथ-साथ लड़ रहे थे। गांधी जी से प्रेरित होकर ब्रिटिश गढ़वाल के दलित समुदाय में चेतना का संचार हुआ और वह अपने सामाजिक अधिकारों के लिये मांग करने लगा। सवर्ण समाज को यह अचानक परिवर्तन पसन्द नहीं आया और उसने दलित समुदाय द्वारा सवर्णों की भांति उनकी बारातों को डोला-पालकी में ले जाने पर भारी विरोध किया। अनेक स्थानों पर दलितों की बारातें लूट ली गई। दलितों के साथ हो रहे सवर्णों के अत्याचारों के कारण ब्रिटिश गढ़वाल में चल रहे स्वाधीनता आन्दोलन पर भी इसका प्रभाव पड़ा और महात्मा गांधी द्वारा कुछ समय के लिए ब्रिटिश गढ़वाल में सम्पादित व्यक्तिगत सत्याग्रह पर पाबन्दी लगा दी गई। डोला-पालकी को समस्या के समाधान के लिए ब्रिटिश गढ़वाल के कांग्रेसी एवं आर्यसमाजी कार्यकर्ताओं ने संयुक्त रूप से प्रयास किये। इन्हीं के प्रयासों के परिणामस्वरूप ब्रिटिश गढ़वाल में दलितों को डोला-पालकी के प्रयोग की अनुमति प्राप्त हुई। साथ ही इस समस्या का स्थायी समाधान भी हुआ।

KEY WORDS-ब्रिटिश गढ़वाल, दलित, डोला-पालकी।

आधुनिक सुधारों के इस परिवर्तनशील युग में गढ़वाल क्षेत्र इतना पिछड़ा हुआ था कि उसमें धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक सुधारों के विचारों को सर्व साधारण तक पहुंचाना सहज नहीं था और उनकों पहुंचाने के लिए साधन भी उपलब्ध नहीं थे। यहाँ की भूमि पथरीली, उबड़-खाबड़, पहाड़ और वनों से आच्छादित थी। यहाँ लाखों की संख्या में दलित निवास करते थे, जो अनेक उपजातियों मे विभाजित थे। आवागमन के साधनों का अभाव, संचार व्यवस्था की कमी आदि अनेक ऐसे कारण थे, जिनके कारण विद्वानों के विचार गढ़वाल के सुदूरवर्ती गांवों तक आसानी से नहीं पहुंचाये जा सकते थे। यही कारण था कि यहाँ के दलित डरे, सहमे रहते थे और वह विकास से कोसों दूर थे।

ब्रिटिश गढ़वाल में उस समय हिन्दू दो श्रेणियों में विभक्त थे-सवर्ण एवं दलित। सवर्णों के अन्तर्गत ब्राह्मण एवं राजपूत आते थे, जबकि दलित वर्ग के अन्तर्गत हरिजन/शिल्पकार आते थे। शिल्पकारों का प्रमुख कार्य भवन निर्माण करना था। इसके अतिरिक्त हरिजन बढ़ई का काम, तेली का काम एवं चर्मकार तक का कार्य किया करते थे। भारतीय संविधान में वर्तमान में दलित वर्ग को अनुसूचित जाति के रूप में पहचान प्राप्त है। अनेक व्यवसायों में लिप्त होने के बावजूद इस वर्ग की आर्थिक स्थिति दयनीय थी और उन्हें जीविकोपार्जन

©SHARAD

के लिए सवर्णों पर निर्भर रहना पड़ता था। समाज के सबसे नीचे के तबके के होने के कारण उनकी सामाजिक स्थिति भी उन्नत नहीं थी। सवर्ण समाज द्वारा उन्हें उन सब रीति-रिवाजों से वंचित कर दिया गया था जिनका उपयोग सवर्ण समाज किया करता था।[1] विशेषकर विवाह उत्सव में प्रयोग किये जाने वाले डोला-पालकी का उपयोग गढ़वाल का दलित वर्ग नहीं कर सकता था।

बीसवीं शदी के प्रारम्भ में शिल्पकारों मे आयी जागरूकता के कारण उन्होंने सवर्णों के कार्य करने छोड़ दिये। इन कार्यों में प्रमुख थे-सवर्णों के खेतो में हल लगाना, उनका बोझा ले जाना, पशुओं की देखभाल करना आदि। ऐसा करने से वर्ग संघर्ष होना स्वाभाविक ही था। शिल्पकार सवर्णों की भांति जीवन यापन करना चाहते थे, जबकि सवर्ण इससे सहमत नहीं थे। शिल्पकार, विवाहोत्सव में डोला-पालकी का प्रयोग करना चाहते थे, जो सवर्णों को स्वीकार नहीं था। शिल्पकारों द्वारा सवर्णों की बराबरी किये जाने की लालसा का परिणाम यह हुआ कि दोनों वर्गों के मध्य संघर्ष अत्यधिक बढ़ गया और इससे शिल्पकारों को भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ी। गढ़वाल के शिल्पकार अधिकतर भूमिहीन थे।

शिल्पकारों में सर्वप्रथम जागृति दोगड्डा (कोटद्वार) गढ़वाल में आयी। यहाँ निवास कर रहे शिल्पकारों ने सवर्णों की भांति रहन-सहन अपना लिया, जिसका सवर्णों द्वारा भारी विरोध किया गया और उन्हें प्रताड़ित किया गया। सन् 1923 में शिल्पकारों द्वारा प्रथम बार पालकी का प्रयोग किया गया। बारात, ग्राम-बोरगाँव दुगड्डा के समीप से मौजा काण्डी, पट्टी बिजलौट में गयी थी। बारात जब दूसरे दिन पालकी सहित सांयकाल को काण्डी ग्राम में पहुंच रही थी कि अचानक वहां के सवर्णों ने पालकी देखकर बारात पर हमला कर दिया। बारातियों को मारा-पीटा गया। सवर्णों द्वारा उस मकान को घेरा लिया जहां शिल्पकारों की बारात ठहरी हुई थी। दो दिन तक स्थानीय पटवारी के कारण शान्ति बनी रही। अन्त में दोनो पक्षों के मध्य यह समझौता हुआ कि बारात बिना डोला-पालकी के वापस जा सकेगी और अन्त में तीसरे दिन ऐसा ही हुआ। बाराती, डोला-पालकी वहीं छोड़कर वर-वधू को पैदल लेकर कड़तिया नामक स्थान में रात्रि-विश्राम के लिए पहुंचे। चौथे रोज प्रातः काल काण्डी ग्राम से दो शिल्पकार डोला-पालकी को लेकर रातों-रात वहाँ पर पहुंच गये, जहाँ बारात ठहरी हुई थी। तत्पश्चात शिल्पकारों की बारात वहाँ से डोला-पालकी में अपने गन्तव्य की ओर बढ़ी और जैसे ही बारात सीधींखाल पहुंची, वहाँ सैकड़ों की संख्या में एकत्रित सवर्णों ने बारातियों पर हमला कर दिया। बारातियों को मारा-पीटा गया एवं सामान, डोला-पालकी सहित लूट दिया गया। बारात, वधू को लेकर पैदल ही अपने घर पहुंची।[2] बारात में आर्य समाजी कार्यकर्ता ठाकुर शेर सिंह नेगी और आर्य समाज के पुरोहित आनन्दी प्रसाद गौड़ भी मौजूद थे।

बारात को लूटने का मामला अदालत में चला। परिणामस्वरूप अनेक सवर्ण नेता गिरफ्तार कर लिये गये। उन पर मुकदमा चला, आर्य समाज के स्वामी परमानन्द ने इस मुकदमें की पैरवी की। दोनों पक्षों का हजारों रुपया इस मुकदमें पर व्यय हुआ। अन्त में कुछ बुद्धिजीवियों द्वारा दोनों पक्षों के मध्य राजीनामा करवाया गया। समझौते में यह तय किया कि सवर्ण गढ़वाल में शिल्पकारों का शोषण नहीं करेंगे। तत्पश्चात ब्रिटिश सरकार की अदालत में मुकदमा खारिज कर दिया गया।[3] इसके पश्चात एक दो घटनाओं के अतिरिक्त क्षेत्र में कोई बड़ी घटना, घटित नहीं हुई और शिल्पकारों की बारातें डोला-पालकी में बिना किसी बाधा के निकाली जाती रहीं।

फरवरी 1924 के अन्त में ग्राम कोरीखाल से एक बारात मौजा बिंदलगांव जाने वाली थी, जिसे सवर्णों के कोप का भाजन बनना पड़ा। आठ दिनों तक बारात को रोककर रखा गया। शिल्पकारों का अपराध मात्र यह था कि बारात में डोला-पालकी का प्रयोग किया गया था। तत्पश्चात आर्य समाजी नेता बलदेव सिंह आर्य एवं ब्रिटिश उप आयुक्त के हस्तक्षेप के पश्चात शिल्पकारों की बारात को सवर्णों के घेरे से मुक्त कराया गया[4]।

2 फरवरी, 1928 को पंचम सिंह, ग्राम छोटी, निवासी की बारात पालकी सहित मौजा बैसोखी जा रही थी कि सत्ती कैमठ के आगे जो डाडामण्डी की समीप है, लंगूर पट्टी के सवर्णों द्वारा बारात को रोक दिया गया। बाराती दो दिन तक बिना भोजन वस्त्र के नदी के किनारे ठण्ड में पड़े रहे। तीसरे दिन बारात पटवारी और कानूनगो की सहायता से गाँव पहुंची। बारात, वधू को लेकर डोला-पालकी सहित वापस आना चाहती थी कि इतने में ही सवर्णों के एक दल द्वारा वधू पक्ष के आंगन में बारात पर हमला कर दिया गया। वर का बिस्तर, बर्तन, पलंग, वाद्य यन्त्र एवं डोला पालकी आदि वह सब छीन लिये गये, जो वधू पक्ष द्वारा उसे दिये गये थे। सम्पूर्ण घटना को सरकारी अधिकारी मूक दर्शक बन कर देखते रहे। घटना के पश्चात बारात महीनों तक वहीं रुकी रही और अन्त में बाराती वधू को बिना डोला पालकी के पैदल ही ले आये।[5] इस घटना के पश्चात शिल्पकारों ने एकजुट होकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध आन्दोलन की चेतावनी दी, जिसका परिणाम यह हुआ कि स्थानीय प्रशासन द्वारा बारात को लूटा गया सामान उन्हें वापस दिलवा दिया गया, परन्तु सवर्णों के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की गई।[6]

अपने ऊपर सवर्णों द्वारा किये जा रहे अत्याचारों से पीड़ित होकर ब्रिटिश गढ़वाल के पांच हजार शिल्पकारों ने 24 मार्च, 1929 में धर्म परिवर्तन कर ईसाई बनने का निश्चय किया। जब इनकी भीड़ कोटद्वार मिशन बंगले के मैदान में लगी थी तो कोटद्वार के आर्य समाजी एवं कांग्रेसी कार्यकर्ताओं में खलबली मच गई। शिल्पकारों को धर्म परिवर्तन कराने से रोकने के हर सम्भव प्रयत्न किये गये। परन्तु सवर्णों द्वारा प्रताड़ित बोरगांव और बिंदलगाँव के अनेक शिल्पकारों ने ईसाई धर्म अंगीकार कर लिया[7], जो आज भी ईसाई हैं।

सन् 1932 में जुवा गाँव से ग्राम लंगूरी के लिए पालकी में जा रही शिल्पकारों की एक बारात के साथ पुनः सवर्णों द्वारा अत्याचार किया गया। 19 जनवरी 1932 को ग्राम ल्वींठा से शिल्पकारों की बारात ग्राम जड़ियाना जा रही थी। बारात में प्रयोग की गई पालकी के कारण इसे कई दिनों तक रोक कर रखा गया। बारात पक्ष को इससे बहुत हानि हुई। तत्पश्चात मामला ब्रिटिश उपायुक्त की अदालत में चला। अदालत का निर्णय बारात पक्ष में रहा। इस घटना से सवर्णों को बहुत मानसिक आघात लगा। सन् 1933 में एक बारात लंगूरी ग्राम से मैंदोली आयी। बारात की रक्षार्थ सरकारी कर्मचारी भी थे। परन्तु फिर भी सवर्णों द्वारा बारातियों के साथ अभद्रता की गई।[8] पालकी पर चढ़ने उतरने के प्रश्न पर बारातियों ने सवर्णों के विरुद्ध मामला अदालत में प्रस्तुत कर दिया। प्रकरण स्पष्ट न होने के कारण ब्रिटिश गढ़वाल की अदालत का निर्णय सवर्णों के पक्ष में आया। परन्तु बारातियों की ओर से इस मामले की अपील माननीय उच्च न्यायालय में कर दी गई। 27 फरवरी 1939 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने मुकदमें का निर्णय ब्रिटिश गढ़वाल के दलितों के पक्ष में दिया और उतरने चढ़ने के कथित रिवाज़ को गरीबों को तंग करने वाला बतलाया।[9]

जब ब्रिटिश गढ़वाल के शिल्पकारों पर यहां निवास कर रहे सवर्ण अत्याचार कर रहे थे तो उस समय

ब्रिटिश गढ़वाल के डिप्टी कमिश्नर, डब्लू0जी0एफ0 ब्राउन (01.10.1930 से 05.02.1934) थे।[10] ब्रिटिश गढ़वाल से अन्यत्र स्थानान्तरण होते समय अपने एक सम्मान समारोह में 3 फरवरी 1934 को उन्होंने शिल्पकारों की समस्या पर कहा था-''गढ़वाल में ऐसा कोई कानून है जो दलितों को डोला-बाराती के प्रयोग से रोकता हो, मेरे संज्ञान में आज तक नहीं आया। दलित बिना रोक टोक के डोला-पालकी में किसी भी रास्ते पर आ-जा सकते हैं। दलितों को जो डोला-पालकी में जाने से रोकेगा वह कानूनन सजा पायेगा।''[11]

ब्रिटिश गढ़वाल की निम्न जातियों पर उच्च जातियों के अत्याचारों का समाचार धीरे-धीरे सम्पूर्ण भारत में फैल गया। इस सन्दर्भ में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने लिखा-''गढ़वाल में हरिजनों के साथ जो व्यवहार हो रहा है, वह बहुत अन्याय युक्त है। गढ़वाल इतनी दूर और अन्य जिलों से अलग है कि लोगों का वहाँ तक पहुंचना बहुत कठिन है। हम कांग्रेस कमेटी के सदस्यों का यह कर्तव्य है कि इन दलित बन्धुओं पर होने वाले अन्यायपूर्ण दुर्व्यवहार को रोकने का प्रयास करें।''[12]

सन् 1940 को महात्मा गांधी के आह्वान पर सम्पूर्ण देश में व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। ब्रिटिश गढ़वाल में दलितों का उत्पीड़न अभी भी जारी था। सन् 1940 में ग्राम-मैंदोली एवं ग्राम बिंजोली में सवर्णो ने दलितों की पालकी पर जाती हुई बारात को पालकी से उतार दिया एवं उनके साथ अभद्रतापूर्ण व्यवहार किया। घटना इस प्रकार थी कि दलित अपनी बारात सवर्णों के आंगन से ले जाना चाहते थे, परन्तु सवर्ण इससे सहमत नहीं थे। अतः दलित अपनी बारात अन्य मार्ग से ले जाने पर सहमत हो गये। स्थानीय पटवारी के हस्तक्षेप के कारण बारात सवर्ण हिन्दुओं के आंगन से ही ले जायी गयी। इसका परिणाम यह हुआ कि सवर्णों ने क्रोधित होकर दलितों की बारात को लूट लिया। ब्रिटिश गढ़वाल में दलितों पर हो रहे अत्याचारों की जानकारी 4 जनवरी, 1941 को रमेश चन्द्र बहुखण्ड ने पत्र के माध्यम से महात्मा गांधी को दी। पत्र में लिखा था-''गढ़वाल का सत्याग्रह तब तक इस बिना पर स्थगित कर दें जब तक यहाँ शिल्पकारों पर हो रहे सवर्णों के अत्याचार बन्द न कर दिये जायें।''[13]

महात्मा गांधी पर इस समाचार की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उनका कहना था कि जिस क्षेत्र में हरिजनों पर इस तरह के अत्याचार होते हैं, वहाँ की जनता को सत्याग्रह करने का कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने 25 जनवरी 1941 को गढ़वाल का सत्याग्रह स्थगित कर दिया और डोला-पालकी सम्बन्धी घटनाओं की जांच के लिए प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की ओर से पूर्णचन्द्र विद्यालंकार को ब्रिटिश गढ़वाल भेजा गया।[14] 23 फरवरी 1941 को लैन्सडौन के पंचायती धर्मशाला मैदान में सर्वदलीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में ब्रिटिश गढ़वाल से डोला-पालकी नामक कुप्रथा को समाप्त करने पर विस्तृत चर्चा की गयी। सम्मेलन अपने उद्देश्य में सफल रहा। सम्मेलन की सफलता से विज्ञ होकर गांधी जी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह पर ब्रिटिश गढ़वाल में लगा प्रतिबन्ध समाप्त कर दिया। डोला-पालकी नामक समस्या के पूर्ण समाधान के लिए बलदेव सिंह आर्य एवं कमल सिंह के नेतृत्व में एक स्थायी समिति का गठन किया गया। ब्रिटिश सरकार ने भी हरिजनों को उत्पीड़ित करने वालों के विरुद्ध दण्ड का विधान बनाया।[15]

सरकार द्वारा कानून बनाये जाने के बावजूद प्राचीन परम्परायें आसानी से समाप्त नहीं हो सकतीं थी और यही हुआ भी। ब्रिटिश गढ़वाल के सुदूरवर्ती क्षेत्रें में डोला-पालकी की समस्या यथावत बनी रही। महात्मा

गांधी द्वारा स्वयं स्वीकार किया गया-'अभी कुछ ही दिन हुए, गढ़वाल में बिना किसी बाधा के एक हरिजन दुल्हिन को पालकी में ले जाने का समाचार मुझे प्राप्त हुआ है, किन्तु यह मामला एक अपवाद ही सिद्ध हुआ और हरिजनों को डोला-पालकी का उपयोग न करने देने का प्रचलन वैसे ही जारी है जैसे पहले था।'[16]

डोला-पालकी समस्या के समाधान के लिए देश के शीर्षस्थ नेताओ ने समय-समय पर अनेक प्रयास किये। ब्रिटिश गढ़वाल के सवर्णों को समझाने के प्रयास किये कि वह हरिजनों पर अत्याचार बन्द कर उन्हें भी अपनी बारातों में डोला-पालकी का उपयोग करने दें। स्थानीय कांग्रेसी कार्यकर्ताओं द्वारा सवर्णों का समझाया गया कि इस कुप्रथा से सम्पूर्ण देश में ब्रिटिश गढ़वाल की छवि बहुत खराब हो रही है। अतः स्थानीय हरिजनों का उत्पीड़न अविलम्ब बन्द कर दिया जाये एवं उन्हें सामाजिक समानता के प्रतीक के रूप में डोला पालकी का प्रयोग करने दिया जाये। यद्यपि ब्रिटिश सरकार द्वारा गढ़वाल में व्याप्त डोला-पालकी नामक कुप्रथा के उन्मूलन के लिए प्रयास किये गये। परन्तु वह सार्थक सिद्ध नहीं हुए। ब्रिटिश सरकार ने स्थानीय वर्ग संघर्ष के इस सार्थक युद्ध में सीधा हस्तक्षेप नहीं किया। कारण यह था कि वह किसी भी वर्ग को असन्तुष्ट कर उन्हें अपनी सत्ता के विरुद्ध नहीं करना चाहती थी। ब्रिटिश सरकार का एकमात्र ध्येय गढ़वाल में शासन करना था ना कि स्थानीय समस्याओं का समाधान, और यही उन्होंने किया भी।

डोला-पालकी समस्या के समाधान के लिए सवर्णों पर निरन्तर दबाव बढ़ता गया। तत्पश्चात् सवर्ण भी समझ गये कि अब हरिजनों को अधिक समय तक उनके द्वारा उत्पीड़ित नहीं किया जा सकता। अतः सवर्णों द्वारा स्वयं ही हरिजन दुल्हनों को डोला-पालकी में बैठाकर विदा किया जाने लगा। इस तरह एक लम्बे संघर्ष के पश्चात ब्रिटिश गढ़वाल से डोला-पालकी नामक समस्या का समाधान हुआ।

सन्दर्भ

1. आर्य, बलदेव सिंह-डोला-पालकी : सवाल, पृष्ठ सं0 5

2. शाह, राजीव लोचन (सम्पादक)-नैनीताल समाचार-साप्ताहिक पत्र (15 अगस्त 1942, नैनीताल) मोहन, एल0 (सम्पादक)-उत्तराखण्ड में दलित चेतना (उमेश डोभाल स्मृति ट्रस्ट, पौड़ी पृष्ठ सं0 5,6)

3. डबराल, डॉ0 शिवप्रसाद-उत्तराखण्ड का इतिहास भाग-6 पृष्ठ सं0 257 (वीरगाथा प्रकाशन, दुगड्डा, कोटद्वार गढ़वाल)

5.6. चन्दोला, डॉ0 सुरेश (सम्पादक)-स्मारिका-स्वाधीनता संग्राम में गढ़वाल (1997-98) पृष्ठ सं0 22,23 (जिला पंचायत, पौड़ी गढ़वाल)

7. कोठियाल, संजय (सम्पादक)-युगवाणी-मासिक, पृष्ठ सं0 6,7 (देहरादून, 1992-93)

8. कोठियाल, संजय (सम्पादक)-युगवाणी-मासिक, पृष्ठ सं0 43 (वर्ष 6, अंक 11 सितम्बर 2006 देहरादून)

9. अनन्त, दयानन्द (सम्पादक)-पर्वतीय टाइम्स-पाक्षिक-समाचार पत्र (15 जनवरी,1943,गोविन्द लेन,नई दिल्ली)

10. चन्दोला, डॉ0 सुरेश (सम्पादक)-सफरनामा, पृष्ठसं0 (111) (क्रियेटिव मीडिया ग्रुप,पौड़ी गढ़वाल, 2000)

11. बड़थ्वाल, चन्द्रमोहन-बलदेव सिंह आर्य स्मृतिग्रन्थ, पृष्ठ संख्या-8-9 वर्ष 1997 (देहरादून)

12. पाण्डे, शिरीष (सम्पादक)-शक्ति-साप्ताहिक-समाचार पत्र (2 फरवरी 1941, अल्मोड़ा)

13. नेगी, कुंवर सिंह (सम्पादक)-कर्मभूमि-साप्ताहिक-समाचार पत्र (14 अगस्त, 1939, कोटद्वार गढ़वाल)

14. नरेन्द्र, अनिल (प्रमुख सम्पादक)-वीर-अर्जुन-साप्ताहिक समाचार पत्र (18 मई, 1942, प्रताप भवन, 5 बहादुरशाह जफर मार्ग नई दिल्ली-110002)

15. बहुगुणा, रामप्रसाद-देवभूमि-साप्ताहिक-समाचार पत्र (26 जनवरी,1978 नन्दप्रयाग गोपेश्वर, चमोली गढ़वाल)

16. गांधी, मोहनदास कर्मचन्द-हरिजन-मासिक-समाचार पत्र (6 जून, 1942, सेवाग्राम, गुजरात)